स्त्री–संघर्ष एवं चेतना के विकास में शिक्षा की भूमिका : एक विश्लेषणात्मक अध्ययन

अनामिका कुमारी*

शिक्षा मानव जीवन के महानतम उपलब्धियों में से एक है। यह व्यक्ति के व्यक्तित्व तथा बुद्धि का विकास कर उसे आर्थिक, राजनैतिक तथा सांस्कृतिक कार्य करने योग्य बनाती है। चेतना के विकास में भी शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान है। चाहे पुरूष वर्ग का चेतना हो या महिला वर्ग का चेतना हो सबको गतिशीलता शिक्षा के द्वारा ही प्राप्त होती है। यद्यपि प्रारम्भिक काल में महिला शिक्षा का उद्देश्य महिलाओं को एक पत्नी एवं माता के परम्परागत कर्त्तव्यों को अधिक कुशलतापूर्वक निर्वाह करने योग्य बनाना था न कि सामाजिक, धार्मिक एवं राजनीतिक विकास की प्रक्रिया में उनकी अधिक दक्ष एवं कुशल भागीदारी हेतु उन्हें सक्षम करना था।[1] धीरे–धीरे स्थिति में परिवर्तन आया तथा विशेष रुप से द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के वर्षों में जब अंतर्राष्ट्रीय संस्थाओं ने भी एक ऐसे उपकरण के रुप में शिक्षा की भूमिका पर बल दिया जो नये सामाजिक–व्यवस्था का निर्माण करने हेतु स्त्रियों को सक्षम बना सकें।[2]

स्त्री–चेतना तथा संघर्ष के विकास–मार्ग में रूढ़ियों, परम्पराओं, अंधविश्वासों आदि को अवरोधक माना गया है जिसपर अनवरत रोष भी प्रगट किए गए हैं। यह सच है कि सवर्ण स्त्री एवं दलित स्त्री दोनों पुरूष वर्चस्व की जकड़न में जब्त है किन्तु दलित स्त्री का दर्द कई स्तरों में और भी भयावह है। सवर्ण स्त्रियों के मुकाबले दलित स्त्रियों के शिक्षा के अनुपात नगण्य हैं।[3] भारतीय सभ्यता और संस्कृति को बरकरार रखने का दायित्व स्त्री को वहन करना पड़ा है, स्त्री को इसके लिए सारी मर्यादाओं का पालन करना पड़ता है। यद्यपि समाज में महिलाओं को उपेक्षित होना पड़ा हो परन्तु वास्तविकता इस बात की है कि स्त्री–चेतना के अभाव में समाज में यथोचित बदलाव कदापि संभव नहीं है।

अनिता भारती रचित 'छूटे पथों की उड़ान' को पढ़ने से स्पष्ट होता है कि इन्होंने समाज में व्याप्त विसंगतिपूर्ण परम्पराओं, रूढ़िवादिताओं तथा अंधविश्वासों पर अपना रोष व्यक्त किया है।[4] हिन्दी साहित्य जगत के अनेक साहित्यकारों ने स्त्रियों के दशा एवं दिशा सुधार को लेकर सामाजिक विसंगतियों के विरोध में

***शोधार्थी, हिन्दी विभाग बाबा साहब भीम राव अम्बेडकर विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर (बिहार)**

अपना सार्थक प्रदर्शन किया है ताकि समकालीन स्त्री–समाज के चेतना को हर हाल में गतिशीलता हासिल हो सके।

भारतवर्ष जैसे विकासशील देश में स्त्री–शिक्षा के क्षेत्र में वांछित उन्नति नहीं हो पाई है। शिक्षा का महिलाओं के निर्णय लेने की क्षमता से घनात्मक एवं सार्थक संबंध है तथा निर्णय लेने की क्षमता सशक्तिकरण का एक बड़ा मानक है।[5] यह तथ्य पूर्णतः सत्य है कि स्त्री–जगत् में निर्णय लेने की क्षमता तबतक हासिल नहीं हो सकती जबतक उनके शिक्षा का प्रसार नहीं हो। एक शिक्षित महिला से ही हम निर्णय के सकारात्मक पक्ष की परिकल्पना कर सकते हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि चेतना तथा संघर्ष का शिक्षा से अन्योन्याश्रय संबंध है।

शिक्षित महिलाएँ उत्पादकता, आय एवं आर्थिक विकास के साथ–साथ स्वास्थ्य एवं सुपोषित जनसंख्या के निर्माण में सहायक होती है। शिक्षित महिलाएँ जागरूक रहकर बड़ी कुशलता के साथ सामाजिक दायित्वों को भी संभाल सकती है।[6] वैश्वीकरण के इस युग में यह अपरिहार्य है कि महिलाओं की स्थिति में सुधार लाया जाय तथा इसके लिए यह नितान्त आवश्यक है कि महिलाओं को शिक्षित कर उनके चेतना को जागरूक किया जाय एवं उन्हें समाज में उचित सम्मान देकर एक सशक्त समाज का निर्माण किया जाय। समाज की मजबूती समाज के लोगों पर निर्भर करता है। ऐसे सामाजिक सुदृढ़ीकरण में महिला समुदाय की भागीदारी महत्वपूर्ण होती है जो समाज को एक नई दिशा भी दिखलाने का काम करती है। इन सम्पूर्ण परिकल्पनाओं की पूर्ति का एकमात्र साधन है–स्त्री चेतना का विकास जो एकमात्र शिक्षा के प्रसार से ही अपने सार्थक एवं सफल रूप को प्राप्त कर सकता है।

भारतीय संविधान ने महिला एवं पुरूष दोनों को समकक्ष रखकर उसके विकास के लिए समान अवसरों की गारंटी दी। उसके प्रावधानों द्वारा महिला को सुरक्षा तथा संरक्षण प्रदान करने की व्यवस्था की गई परन्तु इन सबके बावजूद महिला की स्थिति में गुणात्मक परिवर्तन नहीं आया क्योंकि सामाजिक रवैये में बुनियादी बदलाव नहीं हुए।[7] समाज में महिला के प्रति अपने दायित्व में कोताही बरती। महिलाओं के लिए तो पहली चुनौती तो यही है कि बदलते परिवेश में सामाजिक मान्यताओं का सम्मान करते हुए वे समाज के इस दृष्टिकोण को बदल डाले कि स्त्री ही स्त्री की सबसे बड़ी शत्रु है। महिलाओं के समस्याओं के हल हेतु महिलाओं को ही आगे आकर महिलाओं को समझना पड़ेगा, यह भी चुनौती है। परन्तु इससे भी बड़ी चुनौती यह है कि महिलाएँ अपने अनेक रुपों को (बहन, बेटी, पत्नी आदि) सहज रुप में बनाएँ रखकर अपनी लड़ाई लड़ सकती है या नहीं क्योंकि अति उन्मुक्ता, अति परिपक्वता, भारतीय महिलाओं, भारतीय परिवेश और

पारिवारिकता के विरूद्ध है।[8] इस प्रकार के सम्पूर्ण परिकल्पनाओं की प्रतिपूर्ति एकमात्र शिक्षा एवं शिक्षित महिला–जगत् में ही संभव है।

महिला–संघर्ष तथा चेतना के विकास के लिए यह अति आवश्यक है कि महिला–पुरूष के समानता के विचारों को समाज में प्रसारित किया जाना चाहिए। महिलाओं के लिए शिक्षा अनिवार्य हो और शिक्षा के पाठ्यक्रमों में असामनता के मूल्याभारित अंशों को हटाना भी आवश्यक है।[9] यद्यपि समाज एवं सरकार दोनों ने ही समय–समय पर महिला चेतना को बढ़ावा देने के लिए प्रयासरत रहे परन्तु इसकी सार्थकता इसलिए हासिल नहीं हो पाई क्योंकि इसके मूल में महिला वर्ग में शिक्षा का अभाव एवं उनका पिछड़ापन था। यह तय माना जाना चाहिए कि महिला को जागरूक एवं सशक्त बनाने हेतु उनके नवचेतना को विकसित होना जरूरी है।[10] हमारे समाज में रूढ़िवादी परम्पराओं के बीच संघर्ष की सफलता तभी संभव है जब महिलाएँ शिक्षित हों। इस दृष्टिकोण से भी महिलाओं को शिक्षित होना आवश्यक है।[11]

भारतीय स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद शिक्षा के महत्व को देखते हुए भारत के संविधान–निर्माताओं ने संविधान में ही शिक्षा से संबंधित कई धाराओं और अनुच्छेदों का निर्माण किया है। भारतीय संविधान में सन्निहित ऐसे धाराओं एवं अनुच्छेदों का एकमात्र उद्देश्य सबके लिए शिक्षा की व्यवस्था करना है। कोई भी वर्ग शिक्षा को प्राप्त करने से वंचित नहीं रह जाए। इसके लिए 1976 ई0 में संवैधानिक संशोधन के तहत शिक्षा को समवर्ती–सूची में शामिल किया गया। इस प्रकार के अवदानों के बदौलत निश्चित रुप से शिक्षा–प्राप्ति के क्षेत्र में व्यापकता आई जिसके परिणामस्वरूप चेतना को विकसित होने के मार्ग प्रशस्त हुए हैं। यह अकाट्य सत्य है कि एक उच्च स्तरीय शिक्षित समाज में ही उच्च स्तरीय चेतना विराजमान होती है। चेतना का सीधा–सीधा संबंध शिक्षा से है।[12] शिक्षा के बिना चेतना का विकास कल्पना मात्र है।

अतः महिलाओं के लिए समाज को 'घड़ियाली आँसू' बहाने के बजाय उन्हें शिक्षित करने की आवश्यकता है। नारी को नारायणी बनाने के लिए उसके 'आँचल के दूध और आँखों में पानी' वाले हालात बदलने होंगे। शिक्षा सहित रोजगार, राजनीति इत्यादि सभी अवसरों में सामाजिक विभेद उनके विवेक और चेतना को पंगू कर देते हैं। एक सशक्त राष्ट्र के निर्माण में सशक्त एवं चेतनापूर्ण महिला जगत की भागीदारी महत्वपूर्ण होती है। यह स्पष्ट है कि चेतना का उद्भव एवं उसका विकास शिक्षा के सापेक्ष ही संभव है तब यह कहना तनिक भी गलत नहीं है कि जितनी उत्तम महिलाओं की शैक्षिक–व्यवस्था होगी उतनी ही उत्तम उनके चेतना का प्रादुर्भाव होगा तथा इन्हीं चेतनाओं के परिणामस्वरुप एक सशक्त

समाज एवं राष्ट्र का भी निर्माण हो सकेगा। अतः इस तथ्य को स्वीकारना होगा कि किसी भी संघर्ष की बुनियाद चेतना पर निर्भर करती है तथा हरेक प्रकार के चेतना को फूलने एवं फलने के अनुकूल अवसर शिक्षा के द्वारा ही संभव है।

संदर्भ संकेत –

1. जे0 पी0 सिंह : बदलते भारत की समस्याएँ, जानकी प्रकाशन–2003, पृ0 17
2. डॉ0 विशिष्ट एवं डॉ0 शर्मा : भारतीय शिक्षा की नई दिशा, लॉयल बुक डिपो, मेरठ, 1987, पृ0 54
3. योजना : प्रकाशन विभाग, सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार (शिक्षा विशेषांक), अगस्त–2001, पृ0 11
4. अनिता भारती : छूटे पथों की उड़ान, स्वराज प्रकाशन, नई दिल्ली, 2018, पृ0 25
5. सरयू प्रसाद चौबे : भारत में शिक्षा का विकास, इलाहाबाद सेंट्रल बुक डिपो, पृ0 19
6. वही, पृ0 21
7. राकेश द्विवेदी : महिला सशक्तिकरण : चुनौतियाँ एवं राजनीति, पूर्वाशा प्रकाशन, भोपाल, 2005, पृ0 67
8. वही, पृ0 72
9. डॉ0 विशिष्ट एवं डॉ0 शर्मा : भारतीय शिक्षा की नई दिशा, लॉयल बुक डिपो, मेरठ, 1987, पृ0 61
10. वही, पृ0 63
11. सरयू प्रसाद चौबे : भारत में शिक्षा का विकास, इलाहाबाद सेंट्रल बुक डिपो, पृ0 26
12. वही, पृ0 31

–0–0–0–